अपराध

(द्वादश सर्ग)

वंशस्थ छन्द

कृपी-सुता-मर्दित धृष्टद्युम्न का,
बचा किसी भाँति सभीत सारथी।
गया जहाँ अग्रज पाण्डुपुत्र थे,
लगा बताने घटना भयावनी ।।१।।

अजेय सेनापति की अनीकिनी[1],
समूल नष्टा अब हो चुकी वहाँ।
बचा महाभैरव रक्तपात से,
न एक भी सैनिक युद्धभूमि में ।।२।।

महान योद्धा नरश्रेष्ठ वीर जो,
हुए पराभूत न घोर युद्ध में।
उठे अहा भूतल से विलीन हो,
अतीत में क्षेपित वर्तमान से ।।३।।

अधृष्य पाञ्चाल-नरेश-पुत्र जो,
सदा चले सङ्गर[2] में सुरेश से।
अमोघ नाना जिनके महास्त्र थे,
अशेष-सेनायुत कीर्ति-शेष हैं।।४।।

न उत्तमौजा श्रुतकीर्ति भी नहीं,
न ही शिखण्डी श्रुतकर्म भी नहीं।
बली शतानीक न द्रौपदेय भी,
बचा सके भीषण नाश रात्रि में ।।५।।

निशीथ[3] में आ सुत क्रूर द्रोण का ।
प्रदीप्त कालानल सा अवार्य हो ।
लगा मचाने अति घोर हिंसना ।
पटी अशेषा क्षिति छिन्न अङ्ग से ।।६।।

महास्त्रधारी कृप भोज विक्रमी ।
मचा रहे थे नरमेध रात्रि में ।
अजस्त्र - बाणौध - निपात - दीप्ति से ।
तमोगुणी भी सितप्राय शर्वरी[4] ।।७।।

भुजंगप्रयात

सुना घोर वृत्तान्त आतंककारी ।
न विश्वास आया हुआ खेद भारी ।
कहाँ से गिरा वज्र हा जीत मेरी ।
बनी हार धाता[5] यही नीति तेरी ।।८।।

गये वीर सारे बचा मैं अभागा ।
मुझे राज्य का लोभ क्यों हाय जागा ।
धरा धाम से सौख्य कैसे मिलेगा ।
महाशोक कैसे अकेले झिलेगा ।।६।।

मिटे भूमि से जो विरोधी हमारे ।
नहीं आज हैं प्रेष्ट[6] संगी सहारे ।
न तो जीत पाया न ही हार पाया ।
अरे वंश मैंने स्वयं मार खाया।।१०।।

न कोई कहे आज से सत्यभाषी ।
सभी जान लें पातकी बन्धुनाशी ।।
चलो देख लूँ वीर-योद्धा-मुखों को ।
स्वयं का करूँ घात भूलूँ दुखों को।।११।।

सने खून में हाथ मेरे विलोको।
घृणावेग मेरे लिए तो न रोको।
कहाँ है शतानीक बेटा हमारा।
कहाँ वीर पाञ्चाल मेरा सहारा।।१२।।

कहाँ पाँच बेटे गए द्रौपदी के।
बने ग्रास गंभीर खूनी नदी के।
नहीं चेतना देह क्यों छोड़ पाती।
सुना नाश तो भी फटी क्यों न छाती।।१३।।

जहाँ चार अङ्गों भरी वाहिनी[७] थी।
वहीं आज खूनी बही वाहिनी[८] थी।
हुई शर्वरी सैनिको! अन्तकारी।
किया त्याग मेरे लिए हन्त! भारी।।१४।।

गिरे भूमि पै भूप देखा सुतों को।
पड़े धूल में छिन्न मैले मुखों को।।
उठा मुण्ड भू से गले से लगाया।
गयी चेतना बन्धुओं ने जगाया।।१५।।

मन्दाक्रान्ता

जाओ भ्राता नकुल रथ से शीघ्र ही द्रौपदी को।
लाओ देखे वह सुवदना बन्धुओं के शवों को।
बैठी होगी वह भवन में वीत-चिन्ता प्रसन्ना।
क्या जाने भामिनि प्रलय ही हो चुका यामिनी में।।१६।।

खोये सारे तनय विवशा राजपुत्री सुनेगी।
कैसे होगा सहन उसको बन्धुहीना हुई है।
शोकार्ता हो अवनि पर ही क्षीणकाया गिरेगी।
क्या होगा उत्तर विकल हो पूछने जो लगेगी।।१७।।

क्यों छोड़े बान्धव शिविर में सो रहे यों अकेले ।
मेरे पाँचों सुत न तुमने शस्त्र धारी बचाए।
जीती सारी अवनि तुमने हो बने चक्रवर्ती ।
हे राजा क्या नियति-निहता को यही दान देते ।।१८।।

रुचिरा

महाबली नकुल चले शताङ्ग[९] ले ।
गये जहाँ द्रुपदसुता अजान थी ।
कहा चलो नृप तुमको बुला रहे ।
नहीं अरुन्तुद[१०] घटना कही गयी ।।१९।।

तोटक

द्रुपदेशसुता तव शोक पगी ।
धरणी पर वेसुध हाय गिरी ।
झट भीम वढ़े वपु थाम लिया ।
गुरू धीरज से अति काम लिया ।।२०।।

स्त्रग्विणी

आपदा आ पड़ी वन्धु मारे गये ।
भूमि सूनी हुई हाय सारे गये ।
राज भोगा नहीं आपके ही. लिए ।
जीत के तात भ्राता हमारे गए ।।२१।।

आपके बन्धु हैं विक्रमी जो बड़े ।
तो यहाँ वीर सारे कटे क्यों पड़े ।
छोड़ के बन्धुओं को गये थे कहाँ?
मृत्यु का नृत्य होता रहा जो यहाँ ।।२२।।

पुत्र मेरे युवा भी नहीं थे हुए।
कण्ठ कैसे महामीचु ने हैं छुए।
द्रोण ज्याये अरे ओ महापातकी।
प्रेरणा कौन देता तुझे घात की।।२३।।

जीत की मुग्ध वेला बनी दामिनी।
प्राण लेके गयी चण्डिका यामिनी।
भर्तृहीना हुई रो रहीं भामिनीं।
कामना आत्मघाती करें कामिनीं।।२४।।

केश देखो खुले चूड़ियाँ टूटतीं।
वेदना कण्ठ से है कभी फूटती।
फेंकतीं भूषणों को कभी लोटतीं।
दौड़तीं देखने कान्त को लौटतीं।।२५।।

बन्धुओं के विना स्वर्ग भी नर्क है।
आर्य छोड़ो न भाता हमें तर्क है।
पुत्र खोए सभी राज्यश्री के लिए।
मात्र रोना बचा है सभी के लिए।।२६।।

शत्रु को मार डालो हरो आधि को।
भीम जाओ करो दूर तो व्याधि को।
संकटों से घिरे पाण्डवों के लिए।
विघ्ननाशी रहे हो गदा को लिए।।२७।।

शान्त शोकाग्नि होगी हमारी तभी।
द्रौणि का घात कानों सुनूँगी जभी।
वारि भी त्याग दूँगी उठूँगी नहीं।
शत्रु का नाश हो या मरूँगी यहीं।।२८।।

धार के शस्त्र माद्रेय[११] को साथ ले।
बाण तीखे समौर्वी[१२] धनुः हाथ ले।
भीम क्रोधी बढ़े यान पै थे चढ़े।
द्रौणि के यान के मार्ग में थे बढ़े।।२९।।

बसन्ततिलका

आए वहाँ त्वरित केशव क्षेमवाही[१३] ।
बोले गिरा परम-अर्थमयी सुधी वे ।
सम्राट धीरज धरो अब देखना है ।
कैसे अरक्षित वृकोदर को बचाएं ।।३०।।

मानी बली पवनसूनु[१४] गये अकेले ।
चिन्ता मुझे इस घड़ी उनकी लगी है ।
है द्रोणसूनु अति कोपन हेति ज्ञाता ।
दिव्यास्त्र हैं विविध सिद्ध उसे सदा ही ।।३१।।

योद्धा अजेय वह है अति क्रूरकर्मा ।
हिंसा बड़ी हृदय में उसके बसी है।
है नाग सा विषम कोप महारथी का ।
आओ अनिष्ट हम पाण्डव का बचाएं ।।३२।।

मारा अनूप नर-राज निमेष में ही ।
खेदा यमालय महारथ भी शिखण्डी ।
संग्राम-भू पर घटोत्कच को छकाया ।
सेना गयी यमपुरी सब राक्षसी थी ।।३३।।

था वीर पार्षत पराजित युद्ध भू में ।
जा पार्थ सत्वर न जो उससे बचाते ।
नारायणास्त्र जब था उसने चलाया ।
लाखों चमूचर[१५] जले उस अग्नि में थे ।।३४।।

निःशस्त्र होकर नतानन वीर सारे ।
त्राणार्थ पाणि अपने नर जोड़ते थे ।
होता विनाश दल का उस अस्त्र से जो ।
दिव्यास्त्र-वारण नहीं यदि मैं बताता ।।३५।।

हैं भीम-विक्रम वृकोदर भी हमारे ।
संग्रामभू पर सदा पर-भीत-दायी[१६] ।
शारीरिकी प्रवलता न वहाँ चलेगी ।
विद्या महान रण की उस द्रौणि में है ।।३६।।

वाणौध से समर में उसने किया था ।
सारा शरीर क्षत-विक्षत भीम का यूँ ।
मूर्च्छा हुई अति घनी रथ में गिरे थे ।
सारा प्रताप वल खोकर युद्धभू में ।।३७।।

वियोगिनी

सव कौरव भागते हुए रण से कर्ण समेत थे गए ।
अति भीत हिडिम्ब[१७]-सूनु से तव द्रौणायनि ही अड़े रहे ।।३८।।

रणदुर्मद था महावली अभिमानी सुत भैमसेनि[१८] का ।
रण में उस द्रौणि ने हना शितनाराच-विदीर्ण हो गिरा ।।३९।।

वलवान महान साहसी वहु माया कृत घोर आयुधी ।
न घटोत्कच भी वचा सका अपने अङ्गज के विनाश को ।।४०।।

पल में सव राक्षसी चमू शितवाणौध-निपात से हनी ।
रण में सहदेव भीम थे वह भारी क्षय देखते रहे ।।४१।।

असहायक द्रौणि था वहाँ दश मारे सुत कुन्तिभोज के ।
द्रुपदात्मक दो गिरे वली न वलानीक वचा निपात से ।।४२।।

गत प्राण जयाश्व था हुआ न जयानीक श्रुताह्व शेष थे ।
करके वध चन्द्रसेन का झट काटा शिर हेममालि का ।।४३।।

ससहोदर आप थे खड़े रण में पार्षत भी बना रहा ।
करता अविराम ही रहा वह सेना क्षय क्रूर अस्त्र से ।।४४।।

युयुधान[१९] अतीव खिन्न था जब द्रौणायनि के प्रवेग से ।
नर पौरव मालवेश भी सबका[२०]राति चढ़े महारथी ।।४५।।

सबसे वह जूझता रहा झट काटा शिर मालवेश का ।
फिर पौरव वृद्धक्षत्र भी क्षितिशायी चिरकाल को हुआ ।।४६।।

युवराज महान चेदि का जब मारा पटु द्रोण सूनु ने ।
अति क्रोधित भीम थे हुए करने घोर प्रहार थे लगे ।।४७।।

शितबाण चला कृपीज का सहसा सारथि मूढ़ चित्त था ।
हय दौड़ चले इतस्ततः[२१] रण विद्या कर भीम की वृथा ।।४८।।

गजयुद्ध महारथी बली जिसके अस्त्र अमोघ थे सदा ।
अरि-पीड़क पाण्ड्यराज को किसने दारुण अन्त दे दिया ।।४९।।

अवमूल्यन शत्रु का कहीं हितकारी नर को कभी हुआ ।
अवधारित हे कृती करो उस मानी रिपु की अजेयता ।।५०।।

प्रमिताक्षरा

सब पाण्डु पुत्र मिल के चल दे ।
अरि को सवेग करनी फल दें ।
तुम पार्थ यान पर आशु चढ़ो ।
अब भीम मार्ग पर तेज बढ़ो ।।५१।।

वह वायुवेग-सम यान चला ।
जिसका सुपर्णयुत[२२] केतु तना ।
बलवान भीम जिस ओर गए ।
रथ-चिह्न भूमि पर छोड़ गए ।।५२।।

उनको विलोक रथ था बढ़ता ।
पृथु धूलिपुञ्ज नभ में चढ़ता ।
अति घोर शब्द दिक् में भरता ।
जव[२३] से सलज्ज मन को करता ।।५३।।

रथ भीम पास पहुँचा झट से ।
पर वे सवेग रिपु ओर बढ़े ।
अनिवार्य वीर अति कोप भरे ।
भृकुटी विभुग्न युग चक्षु चढ़े ।।५४।।

सरिता तटस्थ ऋषि आश्रम था ।
न जहाँ प्रसार अघ[२४] के तम का ।
चलती कुचाल मन की न जहाँ ।
वह हार क्षेत्र झष[२५]-केतन का ।।५५।।

परिवेश शान्त यह पूत सदा ।
करने मलीन तुम आ पहुँचे ।
अब छद्मवेश यह छोड़ लड़ो ।
कुश छोड़ हाथ फिर शस्त्र धरो ।।५६।।

अब क्या प्रताप सब लुप्त हुआ ।
वनमध्य भीरु छिपता फिरता ।
ऋषिपाद-पद्म अब प्रेय हुए ।
जब अन्तकाल लगता घिरता ।।५७।।

जब सुप्त-वीर-जन-घात किया ।
तब पापभीति मन में न जगी ।
करके महान अपराध बना ।
मुनि धूर्त लाज तुझको न लगी ।।५८।।

भुजंगप्रयात

यहाँ आ छिपा है न शंका मुझे है ।
वड़ी पापभीषा[२६] अभागे तुझे है ।
गिराता कदाचार है इन्द्र को भी ।
छिपाते फिरे आत्म को वृत्र[२७]-द्रोही ।।५६।।

वृथा भीम के धैर्य को मापते हो ।
नहीं कोप से भीति से काँपते हो ।
नहीं ज्ञान खोजी न वैराग्यधारी ।
तपोवेश शैलूषता[२८] ही तुम्हारी ।।६०।।

वंशस्थ

नहीं किरीटी[२९] न मुझे हरा सके ।
रहे सदा अक्षम द्वन्द्व युद्ध में ।
प्रसुप्त - वीरार्दन - मात्र - दक्ष हो ।
प्रमाणिता की अपनी पिशाचता ।।६१।।

प्रमिताक्षरा

यदि चण्ड दण्ड तुझको न दिया ।
जग वीर भीम मुझको न कहे ।
तव गेह मात्र शठ संयमिनी[३०] ।
गुरुपाप-भार वसुधा न सहे ।।६२।।

वन सोमकाम तज रक्तसुरा ।
शित-खड्ग त्याग यह वेश धरा ।
अभिमान छोड़ अपने वल का ।
परिणाम भोग शठ तू छल का ।।६३।।

अपने वचाव हित यत्न सभी ।
कर ले कुविप्र पर त्राण नहीं ।
तव घात पापमय कर्म कहाँ ।
तुझमें पवित्र द्विज प्राण नहीं ।।६४।।

वंशस्थ

अयोनिजा है जननी महीयसी ।
सुपूज्य थे द्रोण महर्षि विश्व में ।
तथापि जन्मा सुत क्रूर मन्द[३१]-धी ।
हिरण्यरेतोत्थित[३२] मंद[३३] खेट[३४] सा ।।६५।।

हुआ समुद्भूत मनुष्य देह में ।
नृशंसतायुक्त धरी क्षपाटता[३५] ।
अतीवगर्हायुत[३६] आज धारता ।
द्विजत्व तेरा जग में नवार्थता ।।६६।।

प्रमिताक्षरा

तुम बाल बुद्धि अति भीम रहे ।
खर[३७]-तेजवान तुमने न सहे ।
अपकर्म कौन तुमने न किया ।
नररक्त - उष्ण रण बीच पिया ।।६७।।

वंशस्थ

स्वबन्धु का रक्त नहीं पिशाच भी ।
समोद पीता जिस भाँति था पिया ।
दिया सहारासुरवंशवृद्धि को ।
भली निभायी पवमानपुत्रता[३८] ।।६८।।

महान दन्ती[३९] वह मालवेश[४०] का ।
गया तुम्हें दे जयमोद स्वप्न सा ।
न नाम - सादृश्यज मोह में पड़ो ।
गजारि ! द्रोङ्गागज अप्रमेय है ।।६९।।

सछिद्र[४१] था कीचक[४२] कामनार्द्र था ।
सुनम्यता कीचक सी अतः हुई ।
जराकृतासन्धि[४३] - विसन्धि - कर्मजा ।
सुकीर्ति धर्मानुज मोघ ही मिली ।।७०।।

प्रमिताक्षरा

छल से परास्त कुरुनाथ करे ।
फिरते अलीक[४४] अभिमान भरे ।
मुझको निरस्त्र लख मोद हुआ ।
यह आत्मघात सम मोह हुआ ।।७१।।

मृगराज दीन दिखते न कभी ।
मदयुक्त नाग[४५] बिकते न कभी ।
विषयुक्त नाग मरते दम भी ।
करता प्रदाह लघु पावक भी ।।७२।।

द्रुतविलम्बित

विगत-भीति सदा द्विज घूमता ।
इस धरा पर गुप्त प्रभाव ले ।
निज-विनाश - क्रियारत जन्तु ही ।
अनघ[४६] की करता अवमानना ।।७३।।

मख[४७]- विधानज -भूति समाज को ।
कर प्रदान पवित्र समुष्णता ।
जगत मंगल हेतु प्रभा धरे ।
अनल क्या सहता करपात को ।।७४।।

वंशस्थ

सशव्द सस्पर्श निरूप ख्यात है ।
मिला पिता से गुण शव्द ही तुम्हें ।
न छू सकोगे मुझ अर्कधाम[४८] को ।
बने तुम्हारा अब वेश्म[४९] व्योम ही ।।७५।।

वृकोदरस्था[५०] न विराट[५१] देह हो ।
वृकोदर स्थान विराट[५२] गेह हो ।
अमोघ बाणाग्नि प्रभाव से हरूँ ।
विभेद भास्वान[५३] समीर में करूँ ।।७६।।

द्रुतविलम्बित

अचिर ही तब पार्थ समेत वे।
जगत के परिपालक आ गए।
बढ़ चले सब द्रौणि समीप ज्यों।
गज चले लड़ने वनराज से ।।७७।।

निज वधोद्यत पाण्डव देख के।
भय हुआ कुछ वीर कृपीज को।
त्वरित सींक करी अभिमन्त्रिता।
यह विनाशक हो रिपुवंश को ।।७८।।

प्रकट था तब भास्वर व्योम में।
अति अवार्य महास्त्र कृपीज का।
अब विलम्ब न क्षम्य क्षणार्थ भी।
वचन केशव ने नर से कहे ।।७९।।

द्रुत धरो धनु पै विधि का दिया।
परम अस्त्र विनाशक शत्रु का।
त्वरित क्षेपण आयुध का करो।
इस महास्त्र निवारण के लिए।।८०।।

रव हुआ अति भैरव व्योम में।
सकल सत्व डरे छिपने लगे।
गगन में प्रकटी सविता त्रयी।
विषम बारिश अग्निमयी हुई ।।८१।।

विकल लोक विलोक दयार्द्र हो।
प्रकट व्यास हुए विधिसूनु[५४] भी।
नमन में शिर थे सबके झुके।
तब गिरा मुनि की उनने सुनी ।।८२।।

विगत में वहु वीर यहाँ हुए ।
विविध - आयुध - सिद्ध नरेश थे।
जगत के हित में निज ज्ञान को ।
कर प्रयोग गये सुरधाम को ।।८३।।

विदित है तुमको यह तथ्य भी ।
सुर मनुष्य न वध्य महास्त्र से ।
फिर प्रयोग किया किसके लिए ।
यह विनाशक कर्म तमोगुणी ।।८४।।

त्वरित संहृत आयुध को करो ।
जगत का भय दूर प्रवीर हो।
घन नहीं घिरते उस देश में।
अवनि आयुध - दग्ध हुई जहाँ ।।८५।।

पंचचामर

मुनीन्द्र की गिरा सुनी लगे निजास्त्र रोकने ।
महान वीर पार्थ वे पड़े न क्षुद्र शोच में ।
अवार्य व्रह्म अस्त्र है विमुक्त एक वार हो ।
वही मनुष्य रोकता जिसे नहीं विकार हो ।।८६।।

महास्त्र फेर लो तुरन्त द्रोणपुत्र शान्त हो ।
विनाश लोक का कभी तुम्हें न तात कान्त हो ।
असंख्य वीर पूर्व ही गये सुरेन्द्रधाम को ।
करो अधृष्य द्रोणसूनु शान्त आत्मधाम को ।।८७।।

किया प्रयास द्रौणि ने परन्तु थी अशक्यता ।
दुखी हुए कहा मुने! क्षमा करें अशक्तता ।
कृतात्म[५५] हूँ नहीं न सिद्ध व्रह्मचर्य है मुझे ।
अतः महास्त्रजात अग्नि फैलती नहीं वुझे ।।८८।।

किया प्रक्षिप्त पाण्डुजात नाश हेतु अस्त्र जो ।
न हों विनष्ट पंच बन्धु हेति[५६] ये निरस्त हो ।
परन्तु स्रोत खेद का बनी अहा अमोघता ।
अतः इसे अजातपाण्डु वंश ओर मोड़ता ।८९।

अरे विमूढ़ शक्ति थी नहीं निवारणार्थ जो ।
प्रयुक्त क्यों किया उदग्र अस्त्र देख पार्थ को ।
किया विमुक्त अस्त्र स्वस्ति कामना तवार्थ की ।
करी विनाश भावना उसी महान पार्थ की ।।९०।।

करो प्रदान शीर्ष का महार्घ रत्न पार्थ को ।
तजो विपाक्त द्वेष को अनित्य नित्य स्वार्थ को ।
अप्राण गर्भ को करे प्रशान्त अस्त्र घोर हो ।
न किन्तु उत्तरा ममत्व की विनष्ट डोर हो ।।९१।।

तूणक वृत्त **श्रीकृष्ण**

दुष्टता असीम द्रोणपुत्र तू दिखा चुका ।
राक्षसी प्रवृत्ति से मनुष्यता मिटा चुका ।
गर्भ में पड़े अबोध पाण्डुवंश - दीप को ।
तू मिटा रहा परन्तु द्रोणवंश - कीर्ति को ।।९२।।

देख शक्ति योग की महान और सत्य की ।
घोषणा अभी करूँ विचित्र एक तथ्य की ।
प्राणहीन पुत्र उत्तरा जने परन्तु मैं ।
प्राण फूँक दूँ अमोघ अस्त्र - दग्ध - तन्तु में ।।९३।।

द्रोण जात कर्म है किया जघन्य पाप का ।
भोग ताप दीर्घ काल तू अमोघ शाप का ।
रक्तपूयपूर्ण देह को धरे फिरे सदा ।
सङ्ग भी मनुष्य का नहीं मिले यदा - कदा ।।९४।।

अब्द हैं सहस्र तीन शाप के प्रभाव के ।
झेल वेदना असीम रक्त के रिसाव से ।
जीवहीन शून्य में करे निवास आज से ।
दूर घूमता रहे मनुष्य के समाज से ।।९५।।

दोधक

अश्वत्थामा

निंदित पार्षत कर्म नहीं था ।
सात्यकि का यश गान किया है ।
रक्तप[५७] भीम प्रशस्य[५८] बड़े ही ।
अर्जुन ने वृष[५९]- घात किया है ।।९६।।

खण्डित गर्भ किया दिति[६०] का जो ।
इन्द्र न लिप्त हुए अघ में थे ।
शापित क्यों न हुए हरि बोलो ।
वे सुर थे अपने दल में थे ।।९७।।

घेर लिया जब भीम बली ने ।
पार्थ बढ़े धनु बाण चढ़ाए ।
और युधिष्ठिर केशव दोनों ।
देख मुझे अति कोपित आए ।।।९८।।

रोष हुआ कुछ भीति हुई थी ।
आत्म बचाव किया शर छोड़ा ।
लौट सका न प्रयास किया था ।
कौशल आज पड़ा कुछ थोड़ा ।।९९।।

मान महर्षि कहा शर मोड़ा ।
पाण्डवनाश नहीं करना था ।
किन्तु अमोघ महास्त्र कहीं तो ।
हानिविधायक को गिरना था ।।१००।।

मोड़ महास्त्र पृथाज बचाए ।
जात बचे, न अजात बचा है ।
शापित किन्तु किया द्विज को भी ।
केशव को यह कर्म रुचा है ।।१०१।।

मान लिया अपराध बड़ा है ।
अर्भक[६१] को शर लक्ष्य बनाया ।
केशव कारण देख रहे हो ।
क्यों फिर भी यह शाप सुनाया ।।१०२।।

तूणक

रत्न दिव्य भाल का निकाल पार्थ को दिया ।
मानयुक्त द्रौणि नें समस्त तेज खो दिया ।
धामलोप व्यक्ति का हुआ सदा कुकर्म से ।
ताप भोगता सदा गिरा मनुष्य धर्म से ।।१०३।।

मञ्जुभाषिणी

करके प्रणाम विधिसूनु व्यास को ।
अवसादयुक्त मन को लिए हुए ।
अपराध मान अपना अरण्य को ।
क्रमशः प्रयाण तब द्रौणि ने किया ।।१०४।।

तूणक

ज्ञान का प्रयोग जो विनाश हेतु ही करे ।
हैं अतीव निन्दनीय पाप से न वे डरें ।
पण्य जो बना रहे मनुष्य रक्त चर्म का ।
भोगना उन्हें पड़े विपाक घोर कर्म का ।।१०५।।

व्यास ने कहा कि द्वन्द्व पूर्ण आज शान्त हो ।
द्वेष से न ग्रस्त हो मनुष्यवर्ग भ्रान्त हो ।
दिव्य अस्त्र आज से प्रयुक्त हों न लोक में ।
रक्त की तृषा मिटे गिरे न विश्व शोक में ।।१०६।।

सन्दर्भ सूची

१. सेना, २. युद्ध, ३. अर्धरात्रि, ४. रात्रि, ५. विधाता, ६. परमप्रिय, ७. सेना, ८. नदी, ६. रथ, १०. मर्म भेदी, ११. नकुल (माद्री के पुत्र), १२. प्रत्यञ्चा चढ़ा हुआ, १३. योग व क्षेम वहन करने वाले, १४. भीम, १५. सैनिक, १६. शत्रु को भय देने वाले, १७. हिडिम्वा का पुत्र घटोत्कच, १८. भीम पुत्र घटोत्कच, १६. सात्यकि, २०. वक शत्रु भीम के साथ, २१. इधर-उधर, २२. गरुड़ के चिह्न से युक्त, २३. वेग, २४. पाप, २५. कामदेव, २६. पाप का भय, २७. वृत्रासुर के शत्रु इन्द्र, २८. वेष वदलकर छलने वाला, २६. अर्जुन, ३०. यमराज की पुरी, ३१. मूर्ख, ३२. सूर्य से उत्पन्न, ३३. शनि, ३४. ग्रह, ३५. राक्षसत्व, ३६. अतिनिन्दनीय, ३७. प्रखर, ३८. वायु, ३६. हाथी, ४०. मालव नरेश इन्द्रवर्मा, ४१. छिद्रयुक्त, दोष युक्त, ४२. विराट राज का सेनापति कीचक वाँस, ४३. जरा राक्षसी जिसने दो भागों में विभक्त जरासंघ का शरीर जोड़ दिया, ४४. असत्य झूठा, ४५. हाथी, ४६. निष्पाप, ४७. यज्ञ, ४८. सूर्य के समान तेजस्वी, ४६. घर, ५०. वृक (भेड़िया) के पेट में स्थित, ५१. विशाल, ५२. पर ब्रह्म, ५३. अग्नि, ५४. नारद जी, ५५. आत्मज्ञ, जिसका स्वयं पर अधिकार हो संयतात्मा, ५६. अस्त्र, ५७. रक्त पीने वाला, ५८. प्रशंसनीय, ५६. कर्ण, ६०. दिति देवताओं की माता है। कहा जाता है कि इन्द्र ने उनके गर्भस्थ शिशु के टुकड़े टुकड़े कर दिए अतः मरुत ४६ पैदा हुए, ६१. भ्रूण, गर्भस्थ शिशु।